प्रस्तावना

आल इन्डिया सालीडेरीटी फोरम (All India Solidarity Forum) के तत्वाधान में दिनाँक मई, 1986 को दिल्ली में आमंत्रित एक सम्मेलन में मौलाना सय्यद अबुल हसन अली नदवी द्वारा दिये गये भाषण को इस पुस्तिका में दिया गया है। दुर्भाग्यवश इस समय हमारे देश में कुछ ऐसी समस्यायें उभर कर सामने आ गई हैं जिनके कारण हिन्दू और मुसलमान दो अलग अलग कैम्पों में वट से गये हैं। यह वात ऐसी है कि हर देश प्रेमी को दुखी करने वाली है यद्यपि इन समस्याओं का संवन्ध केवल मुसलमानों से ही है परन्तु उनकी भावनाओं को हमारे हिन्दी तथा अंग्रेज़ी प्रेस में सामने लाने का वहुत ही कम अवसर मिलसका है। अतः आलइन्डिया सालीडेरीटी फोरम नें यह उचित समझा कि इन समस्याओं के संवन्ध में मौलाना साहव से यह अनुरोध किया जाय कि वे भारतीय मुसलमानों के दृष्टिकोंण से देश में अन्य लोगों को अवगत करायें ताकि इन समस्याओं को समझने में आसानी हो।

डा० मुहम्मद इश्तियाक़ हुसेन क़ुरैशी

दिनांक : 4, मई 1986.

www.abulhasanalinadwi.org

www.abulhasanalinadwi.org

आरम्भ अल्लाह के नाम से जो बड़ा दयालु और कृपालु है।

सम्भयाता (Dialogue) की आवश्यकता तथा लाभ।

मित्रों, बन्धुओं और महानुभावों,

मैं आप सबकी यहाँ उपस्थिति का तथा आने के कष्ट के लिये अपनी तथा अपने सब बुलाने वाले साथियों की ओर से हृदय से स्वागत करता हूँ। हमारे युग और हमारे देश में राजनीतिक सम्मेलनों, पार्टियों के जलसों, बौद्धिक परिचर्चाओं और साहित्यिक बैठकों की कमी नहीं है। शायद ही कोई दिन खाली जाता हो कि कोई ऐसी बैठक न होती हो। पत्रकार सम्मेलनों की भी कमी नहीं। मगर वे मुख्य उद्देयों से की जाती हैं; किन्तु उनमें विचारों के स्वतन्त्र आदान-प्रदान की नौबत कम ही आती है। आवश्यकता है कि परम्पराओं और संकोच से मुक्त होकर जिस तरह एक परिवार या एक महल्ले के लोग किसी जगह इकट्ठे होकर निःसंकोच बात-चीत करते हैं, मित्रों और सम्बन्धियों में शिकवा-शिकायत होती है, गलतफहमियाँ दूर की जाती हैं, अपने परिवार या मोहल्ले की उन्नति के लिये परामर्श करते हैं, बिछुड़े एक दूसरे से गले मिलते हैं, उसी तरह हम कभी-कभी किसी केन्द्रीय स्थान पर जमा होकर मित्रता पूर्ण एवं निःसंकोच विचार-विमर्श तथा विचारों का आदान-प्रदान करें। इसी विचार तथा अनुभव के अधीन अधिक लाभदायक समझा गया है, और इसके अच्छे परिणाम निकले हैं। इसी विचार से आप महानुभावों को आज कष्ट दिया गया है।

विभिन्न सम्प्रदायों को एक दूसरे के बारे में अज्ञानता या अपूर्ण परिचय और उसके प्रभाव तथा हानियां।

महानुभावो! भारत में लग-भग एक हज़ार वर्ष से हिन्दू-

www.abulhasanalinadwi.org

मुसलमान इकट्ठे रहते हैं । शहरों, कस्बों, देहातों और महल्लों में उनकी मिली-जुली आवादी और मिश्रित निवास है। बाज़ारों, फैक्ट्रियों, शिक्षा केन्द्रों, कचहरियों, कार्यालयों और अब सौ वर्ष से अधिक समय हो रहा है कि राजनीतिक आन्दोलनों, सामाजिक कार्यों, स्टेशन और डाकखानों, रेलवे स्टेशनों में उनको एक दूसरे से मिलने-जुलने और एक दूसरे को जानने के अवसर सहज ही मिलजाते हैं।

लेकिन ये दुनियाँ की आश्चर्यजनक घटना और एक तरह की पहेली है, जिसका बुझाना आसान नहीं कि सामान्यतया एक दूसरे के धार्मिक विश्वास, संस्कृति व समाज, आचार-विचार और राष्ट्रीय विशेषताओं से लग-भग इतने अपरिचित हैं, जितना पुराने समय में निकट के दो देशों के रहने वालों के बीच हुआ करता था। हर एक का दूसरे के बारे में ज्ञान अपूर्ण, सतही, सरसरी तथा अधिकतर सुनी सुनायी बातों और अनुमान व कल्पनाओं पर आधारित है। प्रत्येक सम्प्रदाय दूसरे के बारे में अत्यधिक भ्रान्तियों और कभी-कभी विद्वेष पैदा करने वाला साहित्य, राजनीतिक अफवाहें, विष फैलाने वाला तथा झूठा इतिहास, पाठ्य पुस्तकों तथा शोध किये बगैर बृत्तांतों तथा कहानियों के आधार पर अपने मस्तिष्क तथा बुद्धि में उसकी एक ग़लत तथा भद्दी छवि बनाये हुये है। एक सम्प्रदाय के कट्टर और पक्षपात नहीं, सहृदय तथा सीधे-सादेपन वाले लोग अगर दूसरे सम्प्रदाय के मौलिक विश्वास व नाम और सामाजिक सिद्धान्तों के बारे में पूछा जाये तो वह यातो अनभिज्ञता व्यक्त करेंगे या ऐसे उत्तर देंगे जिनसे एक जानकार व्यक्ति को बहुत हँसी आजायेगी। इन पंक्तियों के लेखक को जो अत्यधिक सफर करता है और रेलों व बसों में प्रत्येक वर्ग और हर स्तर के लोगों से उसका अत्यधिक मिलना-जुलना होता है, बार-बार इसका अनुभव हुआ।

लेकिन यह हँसी की बात नहीं, रोने का अवसर है कि सैकड़ों वर्षों से साथ रहने के बावजूद हम एक दूसरे से इतने अपरिचित हैं।

www.abulhasanalinadwi.org

इसका उत्तरदयित्व किसी एक सम्प्रदाय पर नहीं, सब पर और विशेषतया धार्मिक, सामाजिक कार्य करने वालों, अपने देश से सच्चा प्रेम रखने वालों और मानवता तथा मित्रों पर है कि उन्होंने एक को दूसरे से परिचित कराने का कोई वास्तविक प्रयास नहीं किया। और यदि किया भी तो अपर्याप्त। सभ्य विश्व में अब यह सिद्धान्त मान लिया गया है कि प्रेम, आदर व विश्वास और शान्ति के साथ रहने तथा श्रेष्ठ उद्देश्य एवं दूसरे से सहयोग और साझेदारी में कार्य करने के लिये एक दूसरे के सम्बन्ध में उचित जानकारी हासिल करना आवश्यक है। आबादी के हर तत्व, और देश के हर सम्प्रदाय को मालूम होना चाहिये कि दूसरा तत्व, दूसरा सम्प्रदाय किन सिद्धान्तों में विश्वास रखता है। किन नियमों का अपने को पाबन्द और उनको अपने लिये आवश्यक समझता है। उसकी संस्कृति व समाज की विशेषता क्या है? उसको जीवन की कौन सी मान्यतायें प्रिय हैं? उसकी मानसिक शांति तथा आशावान जीवन व्यतीत करने के लिये किन चीजों की आवश्यकता है? कौन से विश्वास और उद्देश्य उसको जीवन से अधिक और सन्तान से ज्यादा प्रिय हैं? हमें उस से बात-चीत करने में, उसके साथ खुशी और आनन्द के साथ समय व्यतीत करने में किन भावनाओं और अनुभूतियों को ध्यान में रखना चाहिये। सह-अस्तित्व (co-existence) जो सभ्य और शाँतिप्रिय जीवन का माना हुआ सिद्धान्त है) पहली शर्त है कि आवश्यक सीमा तक परिचय प्राप्त हो।

एक ऐसे देश के लिये यह सिद्धान्त और भी आवश्यक हो जाता है, जिसको अपनी रंगा-रंग संस्कृति पर गर्व तथा "जियो और जीने दो" के स्वेर्णिय सिद्धान्त में उसकी आस्था है। इस समय सारे विश्व में बहुत दूर के देशों के धर्म और दर्शन, सभ्यता, तथा समाज, भाषाओं तथा संस्कृतियों, शैलियों तथा मुहाविरों, यहाँ तक कि आदत व शिष्टाचार, रूचि तथा लत (Hobby) खेलों और मनोरंजनों, खानों और वेष-यूषा की सूक्ष्मता से परिचित होने का आम झुकाव पाया

www.abulhasanalinadwi.org

जाता है। इसके लिये विश्वविद्यालयों में स्थायी रूप से विषय एवं विभाग स्थापित किये गये हैं। एक देश से दूसरे देश में प्रतिनिधि-मण्डल जाते हैं, प्रोफेसरों और विद्यार्थियों की टीमें रोज़ आती-जाती हैं। यह बड़े क्रोध की बात है कि एक ही देश के निवासी सैकड़ों वर्षों से साथ रहने के बावजूद एक दूसरे से इतने भी परिचित और जानने वाले न हों, जितने एक देश के लोग दूसरे देश के लोगों से होते जा रहे हैं।

इस स्थिति से हानि हिन्दुओं, मुसलमानों को समान रूप से और इसके फलस्वरूप भारत को, बल्कि अन्त में मानवता को पहुँच रही है। देश के सम्प्रदाओं के मध्य बड़ी-बड़ी खाइयां बन गयी हैं, दिलों में कटुता और मन में शंकायें हैं। प्रेम तथा स्नेह से रहने, हँसने-बोलने, जीवन का आनन्द उठाने और एक दूसरे पर विश्वास और एक दूसरे की संस्कृति तथा मत के आदर की सम्पति से (जो जीवन की शोभा तथा चमक-दमक और अल्लाह की बहुमूल्य दौलत है) कुल मिलाकर यह देश वंचित है। इसके फलस्वरूप अनेक सम्प्रदायों और (यह कहने में कोई डर व हानि नहीं) कि विशेषतया मुसलमानों की विशिष्ट योग्यतायें और शक्ति अपनी सफाई और बचाव तथा अपने धर्म, संस्कृति और भाषा की सुरक्षा में व्यय हो रही है। और उनकी वह शक्ति जो उनको प्रकृतिक रूप से उत्तराधिकार में मिली है तथा जिन्हों ने अतीत में, जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में, और दर्शन व सूफीवाद से लेकर निर्माण कला तथा ललित कलाओं तक, शासन–व्यवस्था से लेकर जन-सेवा के मैदानों तक अपने प्रकाशित तथा शापूर्वत चिन्ह छोड़े हैं, अभी इस देश के निर्माण व विकास में और इस की स्थिरता तथा क्रम में इस तरह व्यय नहीं हो रही है जैसी होनी चाहिये। मनो-वैज्ञानिक दृष्टिकोण से इसके लिये यह सन्तोष आवश्यक है कि वह सही ढंग से समझे जाते हैं; उन को काल्पनिक और अनुचित सीमा तक नहीं, वास्तविक और आवश्यक सीमा तक विश्वास तथा आदर की दृष्टि से देखा जाता है। उन के और दूसरे सम्प्रदाय के

www.abulhasanalinadwi.org

मध्य मोटे पर्दे पड़े हुये नहींहें ; उन को शक और तुच्छ तथा अपरिचित व अजनबी की दृष्टि से नहीं देखा जाता है। एक ऐसी पीढ़ी और सम्प्रदाय की तरह जो एक हज़ार वर्ष से हमारे साथ दीवार से दीवार अग़ल-बग़ल मिलाकर रह रहा है। हम उसके चेहरे के रंग ढंग, उस की विशेषताओं और कमज़ोरियों से आगाह और उसके अतीत से परिचित हैं। हमें उसके धार्मिक विश्वास का उतना ज्ञान है जितना उन लोगों को हो सकता है, जो साथ देने पर नहीं लेकिन साथ रहने पर मजबूर हैं। उन के रीति-रिवाज, उन की संस्कृति व समाज, उनके उत्सवों व त्योहारों और उनके सुख-दुख से हमारी जानकारी एक योरोपीय से अधिक और एक देशवासी तथा सहयोगी के अनुरूप है।

मुसलमानों की मौलिक विशेषतायें

अब मैं आपकी अनुमति से मुसलमानों की चन्द मौलिक विशेषताओं की चर्चा करूँगा जिनका जानना और उनका ध्यान रखना उनकी हर समस्या के समझने और उसके हल कर नेके सम्बन्ध में आवश्यक है।

मुसलमानों की पहली मौलिक विशेषता–निश्चित विश्वास और दृढ़ दीन व शरीयत

विश्व के तमाम मुसलमानों (और भारत के मुसलमान इस व्यापकता के अपवाद नहीं) की पहली विशेषता यह है कि उनका मिल्ली अस्तित्व एक निश्चित विश्वास और एक दृढ़ दीन व शरीयत पर है जिसको संक्षेप में धर्म कहते हैं[1] ।

---

1. विश्व के बहुत से धर्म विशेषतया ईसाइयत दुनियां में अनुभवों और संकटों (Crises) से गुज़री है, और जहाँ राज्य (State) जीवन के तमाम क्षेत्रों पर हावी है और जिसकी आरम्भ से यह प्रतिज्ञा रही है कि

[शेष पृष्ठ 6 पर

www.abulhasanalinadwi.org

(यद्यपि उसका इससे सही अर्थ पूरा नहीं होता और वह शाब्दिक समानता के कारण बहुत सी भ्रान्तियां और सदृशता पैदा करता है) इसी लिऐ इन का मिल्ली नाम और सार्वभौमिक उपाधि किसी नस्ल, खानदान, दीनी अगुवा, मज़हब का प्रवर्तक और देश के बजाये एक ऐसे शब्द से बना है जो एक निश्चित विश्वास और रवैया प्रदर्शित करता है। दुनियां की आम धार्मिक जातियाँ अपने-अपने धार्मिक अगुवाओं, धर्म-प्रर्वतकों पैगम्बरों, मुलकों या नस्लों से सम्बद्ध हैं, और उनके नाम इन्ही व्यक्तियों या उन्हीं नस्लों और देशों के नामों से निकले हैं, जैसे यहूदी बहूद (Judais) ओर बनी इस्राईल (Bani Israel) कहलाते हैं। यहूदा (Judah) हज़रत याक़ूब (अ०) के बेटों में से एक बेटे का नाम और इस्राईल स्वयं हज़रत याक़ूब (अ०) का नाम है। ईसाई (Christians) हज़रत ईसा (Christ) से सम्बद्ध है। या उनको नेसारा (Nazarene) के नाम से याद किया जाता है जिसका सम्बन्ध नासिरह (फिलस्तीन) (Nazareth) की ओर है जहाँ हज़रत ईसा के जीवन का

पृष्ठ 5 का शेष]

"जोकि खुदा का है, वह खुदा को दो, और जो कि क़ैसर का है वह क़ैसर को दो", धर्म का एक बहुत सीमित अर्थ तथा प्रभाव-क्षेत्र रह गया है। और वहां आम तौर पर यह वास्तविक्ता स्वीकार कर ली गयी है कि धर्म मानवता का प्राइवेट मामला है। इसी प्रकार भारत में भी तमाम स्थानो पर मज़हब या धर्म केवल अक्षर-विन्यासों और चन्द धार्मिक अनुष्ठानों (Ritual) को पूर्ण करने का नाम रह गया है। इस्लाम में दीन का अर्थ इस से अधिक विशद और प्रभावशाली है। वह विश्वासों व इबादतों से लेकर आचार-व्यवहारय तथा सभ्यता और आम जीवन के कानूनों पर छाया हुआ है। इसी लिये वह अधिक प्रभावशाली तथा प्रभावित होने वाला तत्व है। अरबी और क़ुरआनी परिभाषा में इस को "दीन" शब्द की संज्ञा दी जाती है जिसकी परिधि मज़हब से अधिक व्यापक है।

www.abulhasanalinadwi.org

अधिकतर हिस्सा व्तीत हुआ था। मजूसियों के धर्म के मानने वालों का जिन को सामान्यतया भारत में पारसी के नाम से याद करते हैं, सही नाम (Zoroastrian) या ज़रतुशी है, जिनका सम्वन्ध इस धर्म के प्रवर्तक और जिसके मानने वाले (Zarathusar) से है। बौद्ध धर्म और बौद्ध मत (Buddhism) अपने प्रवर्तक गौतम बुद्ध से सम्वद्ध हैं। यही स्थिति भारत के आधिकतर धर्मों की है।

लेकिन मुसलमानों का सम्वन्ध जिन को कुरआन और तमाम धार्मिक किताबों, इतिहासों और साहित्यों में "मुस्लिमून" और उम्मते "मुसलेमा" की उपाधि से याद किया गया है तथा अव भी दुनियां के हर हिस्से से वह 'मुस्लिम' की उपाधि से जाने जाते हैं। शब्द इस्लाम की तरफ है, जिसका अर्थ खुदा की वादशाही के समक्ष सिर झुका-देना, कवच डाल देना और अपने आप को हवाले (Surrender) करदेना है, जो एक स्थायी निर्णय, एक निश्चित रवैया, जीने की शैली तथा जीवन का रास्ता है। वे अपने पैगम्वर से अत्यधिक सम्वद्ध होने के वावजूद विरादरी की हैसियत से मोहम्मदी नहीं कहलाते। भारत में अंग्रेजों ने पहली वार उनके कानून का Mohammedan Law नाम रखा, लेकिन उन लोगों ने जो इस्लाम के प्राणों से अवगत थे इस पर आपत्ति की तथा अपने लिये उसी पुरानी उपाधि 'मुस्लिम' को वरीयता दी और संस्थाओं को जिनका नाम अंग्रेजों के आरम्भ के शासन-काल में Mohammedan College या मोहम्डन कानफ्रेन्स पड़ गया था, मुस्लिम से परिवर्तित कर दिया[1] इसी आधार पर अकीदे (विश्वास) और दीने शरीयत का

---

1. उदारणतया स्वर्गीय सर सैयद अहमद खां द्वारा स्थापित मदरसतुल उलूम, अलीगढ़ का नाम पहले ऐन्ग्लो मोहम्डन कालेज (Anglo-Oriental Mohammdan College) था, लेकिन जब विश्व-विद्यालय स्थापित हुआ तो उसका नाम मुस्लिम विश्वविद्यालय रखा गया इस प्रकार अलीगढ़ की प्रसिद्ध कान्फ्रेन्स का नाम आरम्भ में मोहम्डन

[शेष पृष्ठ 8 पर

www.abulhasanalinadwi.org

मुसलमानों की सम्पूर्ण जीवन-व्यवस्था और उन की संस्कृति व समाज में सब से अधिक महत्व है तथा ये प्राकृतिक रूप से उनके सम्बन्ध में असाधारण ढंग से संवेदन शील सिद्ध हुये हैं। उन व्यक्तिगत और धार्मिक समस्याओं पर विचार करने, अथवा कानून बनाने, नियम तथा संविधान, यहाँ तक कि समाजिक तथा शिष्टाचार से सम्बन्धित मामलों में इस आधारभूत वास्तविक्ता को ध्यान में रखने की आवश्यक्ता है।

दीनी सिलसिला तथा अपनी संतान व नस्ल की दीनी शिक्षा के महत्व का कारण

इस निश्चित विश्वास और दीन व शरीयत से सम्बन्ध और उसको अपनी अन्तिम मुक्ति तथा सांसारिक कल्याण का साधन समझने का प्राकृतिक व स्वाभाविक परिणाम है कि वे उसको अपनी सन्तान और आने वाली नस्लों तक हस्तानान्तरित करना तथा इस आस्था एवं दीनी ऋंखला को बनाये रखना आवश्यक समझते हैं। वह इस सम्बन्ध में (वे जिस ऐतिहासिक युग अथवा भौगोलिक क्षेत्र में हों) वे किसी प्रकार का अवरोध या हस्तक्षेप पसन्द नहीं करते, कि यह केवल उस विश्वास तथा दीन की शिक्षा की माँग है। कुरआन मजीद में कहा गया है "या अय्यो हल्लज़ीन आमनू क़ू अन्फोसुकुम व अहलीकुम नारान"[1] (अपनी जानों और लोगों के खानदानों को दोज़ख की आग से बचाओ) और हदीस में है कि तुम में से हर एक अपने निराश्रय मित्रों और अपने अधीन प्रशिक्षण व प्रभाव के लिए उत्तरदायी है, बल्कि यह सन्तान और उत्तराधिकारियों से सच्चे प्रेम का

पृष्ठ 7 का शेष]

एजूकेशनल कान्फ्रेन्स (Mohammedan Educational Conference) था। बाद में उसको मुस्लिम एजूकेशनल कान्फ्रेन्स के नाम से लिखा और याद किया जाने लगा।

१. सूरह अल्लहरीम, आयत ७

www.abulhasanalinadwi.org

भी तक़ाजा है। हर क़ौम का स्वाभाविक अधिकार है कि आदमी जो अपने लिये पसन्द करता है वह अपनी प्यारी औलाद परिवार के लोगों के लिये भी पसन्द करें।

इस आधार पर जिस देश, जिस वातावरण में रहें वह अपनी आने वाली नस्ल तक अपनी आस्था व विशेषतायें हस्तानान्तरित कर सकते हैं और आवश्यकतानुसार उसकी व्यवस्था व सुरक्षा कर सकने की स्वतन्त्रता को आवश्यक समझते हैं और उसके अभाव तथा जमानत व स्वतन्त्रता न होने की स्थिति में वे अपने को वास्तविक रूप से देश स्वतन्त्र व ससम्मान नागरिक समझने में असमर्थ हैं। इस दीनी शिक्षा और बुनियादी आस्था की सुरक्षा के न होने की दशा में उनको ऐसी ही बेचैनी महसूस होती है जैसी मछली को पानी से निकाल कर सूखी जगह पर डाल देने या उनको साँस लेने के लिये हवा से वंचित कर देने से होती है। मैं इस अवसर पर निःसंकोच होकर यह भी आग्रह कर देना चाहता हूँ कि मुसलमानों के लिये दीन व धर्म से अलगाव या उसके परिवर्तन का अर्थ ऐसी भयानक कल्पना है जो मेरे सीमित ज्ञान में किसी धर्म अथवा संस्कृति में नहीं है। यह भी समझ लेना चाहिये कि मुसलमान न केवल धर्म निरपेक्ष (Secular) सरकार का अर्थ और उसके कर्तव्य तथा कार्य क्षेत्र से परिचय रखने वाले देश के लिये सबसे उचित शासन–प्रणाली और नीति समझते हैं। इसलिये वे यह उत्तरदायित्व सरकार का नहीं मानते कि वह उनके बच्चों की धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था करे। वे केवल दो बातें चाहते हैं– एक यह कि उनको इस धार्मिक शिक्षा की एच्छिक व्यवस्था करने से न रोका जाये और उसमें कानूनी व व्यवस्था सम्बन्धी असुविधा न पैदा की जाये। दूसरा यह कि सरकारी स्कूलों में ऐसी शिक्षा धार्मिक आस्था व रीति–रिवाज के रूप में न दी जाये जिससे किसी एक धर्म के विश्वास का समग्रता का प्रचार होता हो, या उनके एकेश्वरवाद के बुनियादी विश्वास व रिसालत का खण्डन, प्रतिरोध एवं उन्मूलन होता है। दूसरी श्रेणी में उनकी अपनी यह भाषा भी प्रिय है और

www.abulhasanalinadwi.org

उसको जीवित रखना चाहते हैं जिसमें उनकी सबसे बड़ी धार्मिक तथा सांस्कृतिक धरोहर है। मेरा तात्पर्य उर्दू से है जिससे सम्बन्ध विच्छेद हो जाने से पीढ़ी का अन्तर (Generation gap) पैदा हो जाता है और कोई भी समझदार राष्ट्र इसकी अनुमति नहीं दे सकता। यह वास्तविकता है कि आप को किसी पुस्तकालय या पुस्तक–संग्रह को आग लगाने या नष्ट कर देने की आवश्यकता नहीं है केवल लिपि की परिपाटी में परिवर्तन कर देना पर्याप्त होगा। इस धर्म का सम्बन्ध अपने भूत से, अपनी संस्कृति से और यदि उसमें धार्मिक धरोहर है, तो धर्म से सम्बन्ध टूट जायेगा। इसलिये मुसलमान अपने मिल्ली अस्तित्व तथा निश्चय को बनाये रखने के लिये उर्दू भाषा की रक्षा और उसके पढ़ने-सीखने के अवसर बने रहने तथा (शासकीय स्तर) पर उसकी शिक्षा की सुविधा को आवश्यक समझते हैं। वे इसके लिये प्रयास कर रहे हैं और शासन तथा सरकारी शिक्षा–प्रणाली से आवश्यक सीमा तक सहयोग तथा सहायता की मांग करते हैं। इस अवसर पर इससे अधिक विस्तार से आग्रह करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह एक स्थायी विषय है और इस पर पूरा साहित्य तथा आन्दोलन मौजूद है।

मुस्लिम व्यक्तिगत कानून के महत्व के कारण

इसी प्रकार यह बात भी मस्तिष्क में रहनी चाहिये कि इन चन्द कानूनों को मुक्त करके जो स्थानीय रीतियों (Convention) या सामंती व्यवस्था के प्रभाव में मुसलमानों ने अपनाये और उनको अंग्रेजी शासन–काल में मोहम्डन ला में सम्मिलित कर दिया गया उनके व्यक्तिगत तथा पारिवारिक कानून (Personal-Law) का वास्तविक तथा बुनियादी अंश कुरआन शरीफ़ से लिया हुआ है। उसका विस्तार, सार तथा व्याख्या हदीस एवं फ़िका पर आधारित है। इनमें कुछ भाग ऐसे स्पष्टीकरण व निश्चय के साथ कुरआन मजीद में आया है या वह ऐसी निरंतरता के साथ सिद्ध और ऐसे

www.abulhasanalinadwi.org

सिलसिले के साथ उस पर अमल रहा है या उस पर उलमा का ऐसा बहुमत हो चुका है कि उससे इन्कार करने वाले अब सैद्धान्तिक व कानूनी दृष्टिकोण से इस्लाम की परिधि से अलग समझा जायेगा तथा उसकी व्याख्या एवं व्यवहारिक अनुरूपता (Application) में समय का कितना ही ध्यान रखा जाये, किन्तु उसमें परिवर्तन अथवा संशोधन का कोई प्रश्न ही नहीं। इस सम्बन्ध में मुस्लिम बहुल देशों की प्रतिनिधि सरकारों तथा विधान पालिका को भी किसी प्रकार के संशोधन का अधिकार नहीं और यदि किसी कारणवश ऐसा करने की चेष्टा की जाती है तो यह शब्द के अक्षरों के परिवर्तन तथा धर्म में हस्तक्षेप के समान है, हां जो समस्या में इज्तिहाद (कुरआन और हदीस के आधार पर धार्मिक नेताओं का अपने तर्क द्वारा अमुक प्रदर्शन धर्म के मामले में) से हैं उनके बारे में कोई स्पष्ट आदेश वाली कुरानी आयेत (कुरान का स्पष्ट आदेश) या निश्चित हदीस नहीं है।

मुस्लिम विद्वान और फ़िका के विशेषज्ञ (जो कानून के ····· की योग्यता रखते हैं) आवश्यक वाद–विवाद व दृष्टि के बाद वर्तमान स्थिति तथा मत भेद की छूट देते हुए दीन के उद्देश्य एवं सिद्धांत की समस्या, को समय और व्यावहारिक जीवन से सामन्जस्य पैदा करने वाला बना सकते हैं। यह प्रक्रिया (Process) इस्लामी इतिहास हर युग में जारी रहा है और इसका बड़ा संग्रह मुसलमानों के पास है (फ़िका व फतवो के रूप) में मौजूद है अिसकी नज़ीर किसी दूसरी मिल्लत के पास हमारी जानकारी में नहीं है।

मुसलमानों का अपने पैगम्बर सल्लल्ला हो अलैहेवसल्लम से सम्बन्ध

उनकी दूसरी विशेषता उनका अपने पैगम्बर से गहरा सम्बन्ध है। उनके यहां खुदा के पैगम्बर सल्लल्ला हो अलैहे वसल्लम की हैसियत केवल एक बड़े इंसान, आदर योग्य व्यक्तित्व और धार्मिक अगुआ की नहीं, उनका सम्बन्ध आपकी जात के साथ कितना अधिक और उससे कितना भिन्न है। जहां तक आप की बड़ाई का सम्बन्ध है,

www.abulhasanalinadwi.org

उसको इस प्रसिद्ध पंक्ति से अधिक ठीक ढंग से नहीं कहा जा सकता है।

"बाद अज़ खुदा बुजुर्ग तुई किस्सा मुख्तसर"

इनको आपके बारे में तमाम मुश्रिकाना (खुदा के गुणों में औरों को भी सम्मिलित करना) विचार और उस अतिशयोक्ति से भी रोका गया है जो कतिपय पैग़म्बरों की उम्मतों (अनुयायियों) ने अपने पैग़म्बर के सम्बन्ध में उचित ठहराया है। एक सही हदीस में स्पष्ट रूप से आया है कि मुझे मेरी सीमा से न बढ़ाना और मेरे बारे में उस अतिरंजना से काम न लेना जो ईसाइयों ने अपने पैग़म्बरों के बारे में उचित ठहराया है। कहना हो तो इस तरह कहना कि "खुदा का बन्दा और खुदा का रसूल"। किन्तु इस संतुलित अक़ीदे (विश्वास) और सम्मान के साथ मुसलमानों को अपने पैग़म्बर के साथ वह भावुकता पूर्ण लगाव, हार्दिक सम्पर्क व सम्बन्ध है जो हमारे सीमित ज्ञान व अध्ययन में किसी राष्ट्र व मिल्लत में अपने पैग़म्बर के साथ नहीं पाया जाता। यह कहना उचित होगा कि उनमें अक्सर लोग आपको अपने माँ–बाप, सन्तान और जीवन से अधिक प्रिय जानते हैं और आपकी मर्यादा की रक्षा अपना कर्तव्य समझते हैं। वे किसी समय भी आपकी मर्यादा पर आँच आने तक को बर्दाश्त नहीं कर सकते। वे इस मामले में इतने भावुक और संवेदनशील सिद्ध हुये हैं कि ऐसे अशुभ अवसर पर वे नियन्त्रण से बाहर हो जाते हैं और अपने जीवन को कुर्बान (बलि) कर देने से भी नहीं हिचकिचाते, हर युग में इस कथन की सच्चाई के लिये घटनायें और प्रमाण मिलेंगे। आज भी आपकी मर्यादा आपका नगर, आपका कथन, आपसे सम्बन्ध रखने वाली वस्तुयें, मुसलमानों के लिये अत्यन्त प्रिय वस्तुयें हैं और वे उनके रक्त तथा स्नायु में गति व ताप उत्पन्न करती रहती है।

यह भी एक ऐतिहासिक तथ्य है कि इस बारे में सदियों से भारतीय मुसलमानों को इस्लामी विश्व में विशिष्टतम स्थान मिलता रहा है। इसके अनेक ऐतिहासिक, बौद्धिक, भौगोलिक, जातीय तथा

www.abulhasanalinadwi.org

मनोवैज्ञानिक परिस्थितियां हैं जिनके विश्लेषण एवं व्याख्या का कार्य साहित्य और काव्य, धर्म और सूफीवाद तथा मनोविज्ञान पर वाद-विवाद करने वाले लेखकों का काम है। यहां इतना कहना पर्याप्त है कि अन्तिम सदियों में बेहतरीन नात (स्तुति) कहने वाले कवि इस देश में पैदा हुये और पैग़म्बर साहब के जीवन पर उत्कृष्ट पुस्तकें (जिनका लोहा अरब व मुस्लिम देशों में भी माना गया और उनसे लाभ उठाने तथा विभिन्न भाषाओं में अनुवाद करने का आन्दोलन प्रारम्भ हुआ) अन्तिम युग में भारतीय लेखकों की लेखनी से उर्दू भाषा में लिखी गयीं।

कुरान मजीद से सम्बन्ध

यही मामला उनका कुरान मजीद के साथ है, कि वे इसे केवल बुद्धिमत्ता नैतिक उद्देश्य तथा सामाजिक कानूनों का कोई संग्रह नहीं समझते, जो किसी श्रेणी में आदर योग्य है और जब सुविधा सम्भव हो तब उस पर अमल कर लिया जाये। बल्कि वे इसको आद्योपान्त शाब्दिक तथा अर्थ से ख़ुदा का कलाम (वाणी) और वही (ख़ुदा की ओर से आया हुआ पैग़म्बर के लिये आदेश) समझते हैं (जिसका एक-एक अक्षर और एक-एक शब्द सुरक्षित है। इसमें किसी शोशे (टुकड़े) का परिवर्तन भी नहीं हो सकता। वे इसको सदैव वज़ू के साथ (पवित्र होकर) पढ़ते और ऊँचे स्थान पर रखते हैं उनमें इसके पूर्ण रूप से कण्ठस्थ करने और अच्छे ढंग से पढ़ने की व्यवस्था व रिवाज है। अकेले भारत में कुरान कण्ठस्थ करने वालों की संख्या हजारों नहीं लाखों में है। रमज़ानुल मुबारक (रमज़ान का मास) में तरावी की नमाज में (जो दिन की अन्तिम नमाज इशा के बाद होती है) मस्जिदों में कम से कम एक बार सम्पूर्ण कुरआन मजीद के पढ़ने और सुनने का आम रिवाज है तथा कोई भी आबाद मस्जिद इससे ख़ाली नहीं है। इन दोनों (पैग़म्बर तथा कुरआन) के बाद उनका दीनी व भावनात्मक सम्बन्ध मस्जिदों व इस्लाम के केन्द्रों

www.abulhasanalinadwi.org

मक्का–मदीना) और पवित्र स्थानों से भी है। यह सम्बन्ध बौद्धिक दृष्टि से उनकी सच्चे देश प्रेम और देश के साथ निष्ठा को न तो नकारता है और न ही उस पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है, क्योंकि इन दोनों में किसी प्रकार का विरोधाभास नहीं है। यह उनके विश्वास तथा कृतज्ञता की भावना का ही फल है कि जिससे आदमी को कोई नेमत खुदा का दिया हुआ धन) मिलती है या उसको इसके कारण सीधा मार्ग मिलता है तथा रोशनी प्राप्त होती है और वह उसका कृतज्ञ रहता है) तथा उनके इतिहास के अध्ययन का भी फल है। यही कारण है कि किसी भावुक, विवेकशील तथा भले व्यक्ति अथवा धर्म को रोका नहीं जा सकता।

केवल मुसलमानों ही नहीं, किसी सम्प्रदाय, धर्म अथवा आबादी की अलग पहचान वाले प्रभाव की शक्ति कार्य, ऊर्जा तथा खुदा की दी हुयी क्षमता से लाभ उठाने और उसकी सहायता से देश के निर्माण व उन्नति से लाभ उठाने एवं देश में एकता तथा विश्वास, सहृदयता तथा गर्मजोशी का वातावरण बनाने के लिये आवश्यक है कि उस मिल्लत या सम्प्रदाय की मौलिक आस्था, उसकी धार्मिक भावनायें, उसकी नाजुक समझ तथा भावुकता (Sensivity) का ध्यान रखा जाये और उन व्यक्तित्वों का वास्तविकताओं के आदर का ध्यान रखा जाये जिन महानता व आस्था या प्रेम सदियों से उसके स्नायु में समाया हुआ है तथा जिनके निरादर से (जो बहुधा अनावश्यक होता है) बड़े–बड़े धार्मिक व राष्ट्रीय हितों को हानि पहुँच सकती है।

इतना ही नहीं, बल्कि परिपक्व दृष्टि, सत्यनिष्ठा, सच्चे देश–प्रेम तथा पड़ोसी के अधिकार की माँग है कि यदि इस धर्म या सम्प्रदाय की कोई ऐसी समस्या सामने आ जाये जो न्याय पर आधारित है और इस सम्बन्ध में वह धर्म या सम्प्रदाय किसी अत्याचार या ज्यादती का निशाना शक्ति के नशे का शिकार है तो उसमें उसका समर्थन किया जाये तथा उस सम्बन्ध में इस धर्म या सम्प्रदाय

www.abulhasanalinadwi.org

के साथ मिलकर सच्चाई का समर्थन किया जाये और पीड़ित का साथ दिया जाये।

गांधी जी परिपक्व दृष्टि, सत्यनिष्ठा एवं उसका लाभ

इस परिपक्व दृष्टि, निष्ठा और अपने देशवासियों की एक उचित समस्या तथा रुख में न केवल समर्थन अपितु नेतृत्व क सजीव उदाहरण गांधी जी की उस ऐतिहासिक कार्य–शैली में मिलता है जो उन्होंने 1919-20 ई. के प्रसिद्ध खिलाफत आन्दोलन का समर्थन करके प्रस्तुत किया। इससे भारत की एकता और स्वतंत्रता संग्राम को वह मूल्यवान लाभ पहुँचा जिसका उदाहरण न इससे पहले मिलता है और न इसके बाद। हम यहां उनकी पुस्तक Search for Truth (सत्य की खोज) का एक उद्धरण प्रस्तुत करते हैं और बाद में स्वतंत्रता आन्दोलन को इससे जो लाभ पहुँचा तथा उस पर जो प्रभाव पड़ा, उस पर विचार करेंगे। गाँधी जी लिखते हैं :–

"कांग्रेस की ओर से पंजाब की डायर शाही जाँच अभी प्रारम्भ ही हुयी थी, मेरे पास हिन्दु–मुसलमानों के उस संयुक्त सम्मेलन में भाग लेने का निमन्त्रण मिला जो खिलाफत की समस्या पर विचार करने के लिये दिल्ली में हो रहा था। इस निमंत्रण–पत्र पर अन्य लोगों के अतिरिक्त स्व. हकीम अजमल खाँ साहब तथा श्री आसफ अली के हस्ताक्षर थे। उसमें यह भी लिखा था कि सम्मेलन में स्वामी श्रद्धानन्द जी भी सम्मिलित होंगे। जहाँ तक मुझे याद है स्वामी जी इस सम्मेलन के उपाध्यक्ष निर्वाचित हुये थे और उसका अधिवेशन नवम्बर में होना निश्चित हुआ। इस सम्मेलन का उद्देश्य उस स्थिति पर विचार करना था जो ख़िलाफत के सम्बन्ध में सरकार के कुशासन से उत्पन्न हो गयी थी और यह निश्चित करना था कि सम्मेलन में ख़िलाफत के अतिरिक्त गोरक्षा की समस्या पर भी बहस होगी और यह उसके निर्णय का सुअवसर है। मुझे गोरक्षा उल्लेख इस सम्बन्ध में पसन्द नहीं आया। मैंने इस निमन्त्रण के उत्तर में जो

www.abulhasanalinadwi.org

पत्र लिखा उसमें सम्मिलित होने का वचन देते हुये यह प्रस्ताव रखा कि इन दोनों समस्याओं को गड–मड नहीं करना चाहिये। अगर इन दोनों के सम्बन्ध में बहस करना है तो इस तरह न कीजिये जैसे सौदा चुकाया जाता है, बल्कि दोनों के गुण तथा दोष पर अलग–अलग विचार कीजिये।

"ये विचार दिल में लिये हुये सम्मेलन में गया इस में भीड़ काफी थी किन्तु उतना नहीं जितना उसके बाद के सम्मेलनों में हुआ। मैंने उस विषय पर, जिसका उल्लेख हुआ है, स्व. स्वामी श्रद्धानन्द से वार्तालाप किया। उन्होंने मेरे प्रस्ताव को पसन्द किया और कहा कि आप इस सम्मेलन में प्रस्तुत कीजिये। मैंने हकीम साहब से भी सलाह ली। सम्मेलन में मैने यह कहा कि यदि खिलाफत की समस्या जैसा कि मैं समझता हूँ, सत्य पर आधारित है, और यदि सरकार ने इस विषय में स्पष्ट रूप से अन्याय किया है तो हिन्दुओं का कर्तव्य है कि वे इसकी क्षतिपूर्ति की मांग में मुसलमानों का साथ दें। उनके लिये यह बात अशोभनीय है कि इस अवसर पर गोरक्षा का मामला बीच में लायें और स्थिति का लाभ उठाकर मुसलमानों से सौदा चुकायें तथा मुसलमानों के लिये भी इस शर्त पर गोबध बंद करना अनुचित है, कि हिन्दू खिलाफत के मामले में उनका साथ दें। यह दूसरी बात है कि मुसलमान हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं को आदर के कारण पड़ोस तथा राष्ट्रीय भाई–चारे के अधिकारों को ध्यान में रखते हुये स्वयं गोबध बन्द कर दें[1]।" श्री इन्दुलाल के न्याजन्ना अपनी अंग्रेजी पुस्तक Gandhiji as I know Him में गांधी जी द्वारा लिखे गये एक उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। वह लिखते हैं :–

"संक्षेप में दावा यह है कि तुर्की के शासन में जितनी अमुस्लिम नस्लें रह रही हैं, उनकी सुरक्षा के पूरे दायित्व को लेकर पूरी तुर्की को तुर्की के अधीन रहना चाहिये। पवित्र स्थानों और अरब द्वीप

---

1. सत्य की खोज पृष्ठ 308.9, अनुवाद सैयद आबिद हुसेन

www.abulhasanalinadwi.org

अर्थात अरब देशों पर इस्लामी उलमा (विद्वज्जन) की क्षमता के अनुसार सुल्तान का अधिकार स्थापित है। हाँ यदि अरबवासी चाहें तो वे स्वशासन के अधिकार हर समय प्राप्त कर सकते हैं।

"मुझे खिलाफत के विषय में विस्तार से जाने की आवश्यकता नहीं थी। मेरी सन्तुष्टि के लिये यही पर्याप्त था कि मुसलमानों की मांगों में कुछ भी अनुचित न था ..... मुझे महसूस हुआ कि खिलाफत के सम्बन्ध में मुसलमानों की मांग केवल न्यायोचित थी, बल्कि ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री ने भी उन मांगों के औचित्य को मान लिया था। इसलिये मैंने अपना कर्तव्य समझा कि प्रधान मन्त्री के इस वचन को पूरा कराने के लिये जो कुछ मेरे लिये सम्भव होगा उससे मैं पीछे नहीं रहूँगा।"

यह थी वह नाज़ुक दलील जिसके आधार पर इससे पहले कि खिलाफत आन्दोलन को वह महत्व मिले जो उसे बाद में मिलेगा, गाँधी जी ने खिलाफत की मांग का समर्थन अपने आवश्यक करार दिया।

प्रसिद्ध राष्ट्रवादी मुस्लिम विद्वान तथा खिलाफत आन्दोलन की प्रामाणिक जानकारी रखने वाले क़ाज़ी मोहम्मद अदील अब्बासी साहब ने अपनी पुस्तक 'तेहरीके खिलाफत' में गाँधी जी की क्रिया-कलापों और व्यस्ततांओं का उल्लेख करते हुये लिखते हैं :-

"गांधी जी भूमि का राज बने हुये चारों ओर दौड़ रहे थे। इस्लामी खिलाफत से जो सहानुभूति उन्होंने व्यक्त की और जिस सहृदयता से वह मुसलमानों के साथ मैदान में आ गये उसका प्रभाव प्रत्येक छोटे-बड़े पर था। शीघ्र ही वह भारतीय मुसलमानों के एक मात्र नेता बन गये। ..... दूसरे खिलाफत सम्मेलन (दिल्ली) के सम्बन्ध में जिसकी अध्यक्षता मौलवी फज़लुल हक़ ने की थी, 24

---

1. मौलाना ज़फर अहमद अन्सारी द्वारा अनूदित पुस्तक से उद्धृत। पृष्ठ 37-38

www.abulhasanalinadwi.org

नवम्बर, 1919 ई. को संयुक्त अधिवेशन की कार्यवाही समाचार पत्रों में इस प्रकार प्रकाशित हुआ है इसके बाद गाँधी जी ने भाषण किया जिसमें आपने खिलाफत के महत्व का उल्लेख करते हुये हिन्दू–मुस्लिम एकता पर बल दिया और कहा कि यदि मुसलमानों के हृदय दुःखी हैं तो हिन्दू उनके साथ सम्मिलित हैं ····· इसके बाद गांधी जी ने खिलाफत कमेटी के लिये चन्दे की अपील की और स्वयं एक पैसा प्रसाद स्वरूप भेंट किया । बस क्या था, यह पैसा नीलाम हुआ और उसे सेठ छुटानी ने खरीदा । एक हजार नकद चन्दा प्राप्त हुआ और डेढ़ हजार का वजन मिला[1] "

अप्रैल 1945 ई. के यंग इन्डिया में गाँधी जी ने स्वयं लिखा :

"खिलाफत का यही आन्दोलन है जिसने राष्ट्र को जागृत किया अब मैं फिर उसे सोने न दूँगा[2] ।"

क़ाजी मोहम्मद अदील अब्बासी लिखते हैं" जो दृष्य हिन्दु मुस्लिम एकता का खिलाफत आंदोलन के समय आँखों के सामने आया, उसे फिर देखने के लिये आँखें तरस गयीं । स्वतन्त्रता आन्दोलन ने जनता के दिल तथा बुद्धि पर अधिकार कर लिया था । अब केवल एक भावना कार्य कर रही थी, कि अंग्रेजों को भारत से निकाल बाहर किया जाये और इसलिये सारा भारत फटे–कपड़ों, नंगे सर और नंगे पैर वाले स्वयं सेवकों से भर गया । लोग अपना काम–काज छोड़कर निकल आये और केवल तीन नारे हिन्दू-मुसलमानों ने मिलकर लगाये थे । "अल्ला-हो-अकबर", "महात्मा गाँधी की जय" "मौलाना मोहम्मद अली की जय," कालेजों और स्कूलों से हिन्दू और मुसलमान लड़के निकल पड़े तथा कन्धों से कन्धा मिलाकर काम आरम्भ कर दिया । एक लहर थी जो दरिया की मौज की तरह जारी

---

1. तहरीके खिलाफत, स्व० क़ाजी मोहम्मद अदील अब्बासी, पृष्ठ १४४-१४५,
2. तहरीके खिलाफत, पृष्ठ २७१

www.abulhasanalinadwi.org

थी। कहीं एक दूसरे से मतभेद अथवा घृणा का नाम तक न था[1]।

उल्टा एवं अदूरदर्शिता पूर्ण व्यवहार

गाँधी जी की यही परिपक्व दृष्टि, सत्यप्रियता और विशाल हृदयता थी जिसके फलस्वरूप हमारे देश में हिन्दू–मुस्लिम एकता का ऐसा दृश्य देखने में आया जो न तो इससे पहले देखने में आया और न बाद में। इससे एक और भी लाभ हुआ जो कि सम्पूर्ण देश विदेशी शासन के विरुद्ध उठ खड़ा हुआ और अन्ततः उसको इस देश के शासन की बाग–डोर छोड़कर देश की जनता के हवाले करना पड़ा। इसके ठीक विपरीत मानसिकता और कार्य पद्धति का मैं एक ऐसा उदाहरण प्रस्तुत करता हूँ जो, इन पक्तियों के लिखने के समय तक विद्यमान है तथा जो इस समय गोष्ठियों, सम्मेलनों सेमिनारों, और पत्र-पत्रिकाओं का विषय बनी हुयी है। यहां तक कि इसकी चर्चा घर-घर तथा हर सभा में है। यह स्थिति है जो उच्चतम न्यायालय के १३ अप्रैल, १९८५ ई. के शाहबानों केस के निर्णय ने पैदा कर दी है। उच्चतम न्यायालय के विद्वान मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति चन्द्र चूड ने यह निर्णय दिया कि मुसलमान सम्बन्धी महिला को उस ससय तक जब तक वह दूसरा विवाह करे और न करने की दशा में तलाक़ देने वाले पति की ओर से आजीवन गुज़ारा (Maintenance) दिया जाना आवश्यक है। इसके लिये तर्क तथा औचित्य क़ुरआन मजीद के शब्द 'मता' से लिया गया जिसका अनुवाद अंग्रेजी के कुछ अनुवादकों ने टीका तथा अरबी भाषा के गहन और विस्तृत परिचय न होने तथा दौड़ में आगे बढ़ने का ध्यान न रखकर (Maintenance) किया है। निर्णय के गुणगान में इसका दावा किया गया कि इस्लाम में महिला को उसका उचित

---

1. तहरीके खिलाफत, पृष्ठ काज़ी मोहम्मद अदील अब्बासी, तरक्की उर्दू बोर्ड, नई दिल्ली, 271-272,

www.abulhasanalinadwi.org

तथा स्वाभाविक स्थान नहीं दिया गया । उसके साथ न्याय नहीं किया गया और इस प्रकार इस नये निर्णय और कानून द्वारा उसके अधिकारों की रक्षा किया जाना आवश्यक है ।

इस निर्णय के लिखने का ढ़ंग तथा इससे जो व्यापक तथा गम्भीर प्रभाव पड़ता है उससे मुसलमानों में इतनी तीव्र प्रतिक्रिया तथा अशान्ति की देश व्यापी लहर पैदा हुयी जिसका उदाहरण (यदि इतिहास लेखकों जैसी सावधानी बरती जाये) खिलाफत आन्दोलन के बाद नहीं मिलता । इसने मुसलमानों के तमाम सम्प्रदायों (Schools of thought) और इस्लामी धर्मशास्त्र सम्बन्धी मतों को एक कर दिया तथा इसके विरुद्ध एक आवाज बना दी जिसका उदाहरण एक लम्बे समय से कम से कम इस देश में देखने में नहीं आया । श्रीनगर से कन्या कुमारी तक तथा बंगाल की खाड़ी से अरब सागर के तट इतनी बड़ी सभायें हुयीं जिनकी मिसाल दूर–दूर तक दिखायी नहीं देती । इन सभाओं में सम्मिलित होने वाले लोगों की संख्या हजारों से लेकर लाखों तक पहुँच गयी । ये लोग उस भावना, लगन तथा उत्साह से सम्मिलित हुये जो केवल ईमान व आस्था, न्याय व सत्यनिष्ठा पर विश्वास और अपने जीवन से अधिक प्रिय धर्म के खतरे का आभास ही धर्म को मानने वाली किसी राष्ट्र को एकत्र कर सकता है ।

मैं केवल अपनी जन्म-भूमि रायबरेली का उदाहरण प्रस्तुत करता हूँ जो अपेक्षाकृत एक छोटा शहर है तथा जिसकी जनसंख्या ..... से अधिक नहीं है । वहां 1 फरवरी, 1986 ई. को जो सभा शरीयत बचाओ के नाम से चन्द नवयुवक कार्य कर्ता की ओर से आयोजित की गयी (जिनकी कोई राजनीतिक या दीनी व विद्वतापूर्ण प्रसिद्ध नहीं थी), उसमें सम्मिलित होने वालों की संख्या सावधानी से लगाये गये अनुमान के अनुसार एक लाख से अधिक थी । लोग अपनी भावनाओं तथा लगन से विभिन्न ज़िलों से बसों और अपने खाने–पीने की व्यवस्था करके आये थे । बड़े

www.abulhasanalinadwi.org

और केन्द्रीय नगरों की सभाओं की व्यापकता एवं सफलता का अनुमान इसी से किया जा सकता है।

उच्चतम न्यायालय के इस निर्णय के सम्वन्ध में मुसलमानों में अशान्ति के तीन कारण थे :–

1. पहला यह कि इससे उनके संवैधानिक कानून पर्सनल लॉ में हस्तक्षेप का दरवाज़ा खुलता है यदि वे इस पर चुप रहते हैं तो उनके पारिवारिक कानून के (जिसको वे अपने धर्म का अंग तथा कुरआन व सुन्नत के स्पष्ट आदेश पर आधारित मानते हैं) सारे अंग खतरे में पड़ जाते हैं और ऐसा सिलसिला आरम्भ हो जाता है जिसके कहीं रुकने की कोई सीमा नहीं। इससे उनका अपने धर्म पर स्वतन्त्रता से चलने और भारत में अपने मिल्ली निश्चय को बनाये रखने की सम्भावनायें समाप्त हो जाती हैं, तथा वे अपना जीवन नदी में मछलियों की तरह बिताने पर मजबूर हो जाते हैं जिनकी कोई पहचान नहीं। जब मछलियों की चर्चा आ गयी तो मैं कहता चलूँ कि जहाँ तक मुसलमानों की मौलिक आस्थाओं का सम्वन्ध है, वे शरीयत के बिना इसी प्रकार आन्तरिक रूप से जीवित नहीं रह सकते जैसे शारीरिक रूप से मछली पानी से बाहर जीवित नहीं रह सकती।
2. उनकी बेचैनी तथा इस निर्णय से उत्पन्न असुरक्षा का दूसरा कारण यह है कि उनके निकट उनकी शरीयत सम्वन्धित महिला को उससे अधिक सुरक्षा प्रदान करती है और मुसलमान जीवन के साधन व अवसर प्रदान करती है जितना सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय ने व्यवस्था दी है। यह उससे कम समय में तथा अधिक सुविधा और ससम्मान हो सकता है, जितना न्यायालय तथा कार्यपालिका के माध्यम से सर्वोच्य न्यायालय के निर्णय के आधार पर सम्भव है। आपत्ति करने वालों का कहना है कि यदि तलाक के बाद पूर्व पति से पत्नी को गुज़ारा-भत्ता न दिलाया गया तो वह निराश्रित हो जायेगी। किन्तु गुज़ारे-भत्ते के सम्वन्ध में शरीयत

www.abulhasanalinadwi.org

की व्यवस्था जो विचारार्थ विधेयक में सम्मिलित कर ली गयी है उस व्यवस्था से कहीं उत्तम है। सर्वोच्च-न्यायालय के शाहबानों वाले निर्णय का जो लोग समर्थन कर रहे हैं उसके अन्तर्गत ऐसी सम्बन्धित महिला के गुजारे-भत्ते का उत्तरदायित्व जो स्वयं अपना जीवन-निर्वाह न कर सके तथा जिसने तलाक के बाद विवाह न किया हो, केवल एक व्यक्ति अर्थात् उसके पूर्व पति पर डाला गया है। और यदि वह व्यक्ति निर्धन हो या मृत हो चुका हो तो उसकी पूर्व पत्नी के लिये कोई सहारा नहीं रह जायेगा। किन्तु विधेयक के अन्तर्गत ऐसी महिला का मरण-पोषण का भार उसके बहुत से सम्बन्धियों पर और यदि वे सब निर्धन हों तो वक़्फ़ बोर्ड पर होगा।

इस अवसर पर उस शिष्टाचार सम्बन्धित तथा मनोवैज्ञानिक अन्तर और प्रभाव को भी ध्यान में रखना चाहिये जो एक ऐसे मर्द से गुज़ारा (नान-नफ़क़ा) पाने और उसके विपरीत अपने निकट सम्बन्धियों से लेने में जो उसका उत्तराधिकार पाने योग्य है, तथा जिनका सम्बन्ध वैवाहिक सम्पर्क पर निर्भर नहीं, खून तथा नस्ल और कुल से है। एक सभ्य तथा स्वाभिमानी महिला पर पड़ता है। क्या एक सभ्य तथा स्वाभिमानी महिला के लिये यह अधिक उचित है कि वह उस मर्द से जीवन-निर्वाह के लिये कुछ प्राप्त करे जिसने तलाक देकर उसे अपने घर से निकाल दिया है, या अपने उन रक्त से जुड़े सम्बन्धियों से जो अब भी उससे प्रेम और उसका सम्मान करते हैं। इसका उत्तर विवेक व सद्बुद्धि रखने वाला हर व्यक्ति आसानी से दे सकता है। मैं यहाँ पर उसके विस्तार में जाना नहीं चाहता। भाषणों तथा उन लेखों में जो दीनियात तथा कानून के ज्ञाताओं ने इस विषय पर लिखे हैं इस पर विस्तार से विचार-विमर्म हुआ है। हमारे सत्यप्रिय, स्वच्छ मनोवृति वाले तथा साहसिक प्रधान मन्त्री ने भी अपने 27 फरवरी, 1986 के भाषण में उसे खुले हृदय से स्वीकार किया है

www.abulhasanalinadwi.org

और इस पर प्रकाश डाला है।

3. मुसलमानों की बेचैनी और मतभेद का तीसरा कारण यह है जो विशुद्ध रूप से सैद्धान्तिक विद्वता से सम्बन्धित, बौद्धिक तथा मानवीय महत्व का है और जिसमें वे वास्तव में अपने ही दीन व शरीयत की रक्षा तथा देख-रेख का कार्य नहीं कर रहे हैं, बल्कि वे दूसरे धर्मों, सम्प्रदायों और तमाम ज्ञान-विज्ञान (Sciences) तथा सम्पूर्ण ज्ञान एवं विचारपद्धति की घेरा बंदी करने का कर्तव्य ओर किसी ज्ञान-विज्ञान में विशेष दक्षता तथा उसके प्रतिनिधित्व का अधिकार किसे प्राप्त है तथा इसमें किसके कथन को प्रमाण (Authority) माना जायेगा, के अन्तर्राष्ट्रीय, बल्कि सांसारिक तथा अनश्वर वास्तविकता को स्वीकार करवाने के पवित्र प्रयास के समान हैं। जो हमारी सम्पूर्ण विचार-प्रणाली तथा शिक्षा-व्यवस्था को अराजकता तथा संकट (Crisis तथा Anarchy) से बचाता है वह यह है कि कुरआन मजीद के शब्दों की व्याख्या एवं सुन्नत और फ़िक़ह (इस्लामी धर्म-शास्त्र) के आदेश के अर्थ निर्णय का अधिकार उस धर्म के विद्वानों एवं विशेषज्ञों (Specialist Scholars तथा Experts) को प्राप्त है अथवा उन पुस्तकों के अनुवाद की सहायता से न्यायालय विद्वान न्याया-धीशों तथा ऐसे बुद्धिजीवियों को प्राप्त है, जो न इस धर्म की मूल भाषा से अवगत हैं और न ही उन्हों ने उसके अध्ययन में अधिक समय एवं आवश्यक श्रम व ध्यान व्यय किया है। मुस्लिम उलमा (ज्ञाता) तथा आम मुसलमानों के इस विचार एवं प्रयास को गति देने वाली विद्वान न्यायधीश द्वारा तुरन्त दी गयी कुरआन परिभाषा "मता" "मतआ" तथा "नफ़क़ा" आदि की वह व्याख्या है जो उन्हों ने, जैसा कि मैंने ऊपर कहा, कुरआन मजीद के एक या दो अंग्रजी अनुवादों और कानून की पुस्तकों का जलदी में किये हुये अध्याय के आधार पर की है। किन्तु वास्तव में इस से प्रत्येक धर्म व सम्प्रदाय की धार्मिक व्यवस्था,

www.abulhasanalinadwi.org

पारिवारिक कानून और आस्था तथा इबादत (आराधना) तक खतरे में पड़ जाते हैं। जैसा कि मैने सुलतानपूर में होने वाली एक विशाल सभा में भाषण में कहा था कि भारत के हर धर्म तथा सम्प्रदाय एवं कम्यूनिटी (समुदाय) को यदि खतरे का आभास हो जाये और उनकी दूर दृष्टि और बौद्धिक कुशाग्रता इस वास्तविकता को भाँप ले जैसा कि एक कवि ने कहा है :–

आज तुम कल हमारी बारी है

तो वे मुसलमानों के अभारी रहेंगे कि उन्होंने अपनी आवाज़ उठाकर इस खतरे के निवारण की व्यवस्था की। मैंने इस सम्बन्ध में क़ुरान मजीद की कुछ आयतों (क़ुरआन के वाक्य) का भी हवाला दिया। मैंने यह भी कहा कि मैं तमाम अरब देशों के शैक्षिक संस्थानों (Academies) तथा कानूनी विशेशज्ञों की कमेटियों का सदस्य हूँ। मैं यदि किसी अरब विद्वान को भी वेद या हिन्दू धर्म की किसी धार्मिक परिभाषा का मनमाने ढंग से बताते हुये उसकी भाषा, सियाक़ व सिबाक (अगला-पिछला, इबारत का अगला-पिछला भाग जिससे किसी बात का अन्दाजा हो) समझे बिना तथा उसके विशेषज्ञ से सहायता लिये बिन सुनूँगा तो मैं पहला व्यक्ति हूँगा जो उस पर कड़ी आपत्ति करूंगा तथा उसकी इस कार्य–शैली को ग़लत कहुँगा। इस सबके अतिरिक्त यह मामला मुस्लिम कम्यूनिटी के एक विशेष व सीमित वर्ग से सम्बन्ध रखता है जिसकी संख्या बहुत अधिक नहीं है। तलाक़ की शर्त तथा सम्बन्धित महिलाओं की संख्या के बारे में सामान्यतया अतिशयोक्ति से काम लिया जाता है। फिर लम्बी अवधि से यह सिलसिला जारी था और यह मामला कभी किसी सार्वजनिक तथा राष्ट्रीय स्तर पर नहीं आया था। सम्बन्धित महिलाओं ने अपने–अपने परिवार तथा रक्त जुड़े सम्बन्धियों, माता–पिता, भाई–बहन और यदि संतान है तो सन्तान के साथ सैकड़ों वर्षों से जीवन व्यतीत किया है। मैंने मद्रास के एक पत्रकार–सम्मेलन में जो 10 नवम्बर, 1985 ई. को हुआ था

www.abulhasanalinadwi.org

जिसमें भारत के चोटी के अंग्रेज़ी समाचार–पत्रों के प्रतिनिधि भी सम्मिलित हुये थे, सहसा प्रश्न किया कि आप में से कौन है जिसने चन्द मुसलमान महिलाओं को सड़क पर खड़ी भीख माँगते और यह कहते हुये सुना कि हम भूखों मर रहे हैं तथा हमारी खबर लेने वाला कोई नहीं है ! किसी ओर से उत्तर नहीं आया कि "हमने देखा है ।

इस सबके बाद फिर यह कानून मुसलमानों के लिए बनाया गया । इसका पालन व छूट मुसलमानों के लिये होती है । इसके लिये हमारे दूसरे परम आदरणीय देशवासियों के, जिनके यहाँ की महिलाओं पर यह कानून लागू नहीं बेचैन तथा अधीर होने का कोई कारण नहीं । किन्तु मुसलमानों के मतभेद एवं विरोध का सिलसिला आरम्भ हुआ तो सारे देश में, और विशेष रूप से अंग्रेजी तथा हिन्दी प्रेस में निःस्वाद, व्यंग्य, आपत्ति एवं निन्दा की एक लहर दौड़ गयी । फिर जब 21 फरवरी, 1986 को यह विधेयक संसद के नये सत्र में पटल पर रख दिया गया और विषय–सूची में आ गया जिन पर संसद को विचार कर निर्णय देना है तो ऐसा मालूम हुआ कि सारे भारत के खतरे की घण्टी बज गयी जैसी (खुदा न करे) देश पर किसी वाह्य आक्रमण अथवा देश के भीतर किसी भयंकर महामारी या ज्वालामुखी फटने पर बननी चाहिये । यह इस पारस्परिक अनुभव (Sense of Proportion) के भी विरुद्ध जिस पर जीवन-व्यवस्था चल रही है । उदाहरण स्वरूप जिस कारण से मानवीय ध्यान, विचार का हकदार है, उसी विचार से उसकी ओर ध्यान देने तथा शक्ति व्यय करने की आवश्यकता है । राई का पर्वत बनाना न स्वस्थ बुद्धि और न ही कार्य करने वाली बुद्धि (Practical Wisdom) का काम है ।

गाँधी जी के उस उच्चशिष्ट व सैद्धान्तिक रवैये तथा उस सक्रिय नेतृत्व को सामने रखते हुये, जिसने एक ऐसे विषय में जिसका सम्बन्ध भारतीय मुसलमानों के आन्तरिक हालात से सीधा न था,

www.abulhasanalinadwi.org

भारत से हज़ारों मील दूर और समुद्र पार खिलाफत से था, जिसका केन्द्र तुर्की था, हमारे देशवासियों और बहुसंख्यक वर्ग के बुद्धिजीवियों तथा पत्रकारों और विभिन्न राजनीतिक दलों के नेताओं का रवैया यह होना चाहिये था कि यदि वे मुसलमानों के रवैये का समर्थन करें तो कम से कम निष्पक्ष रहें, क्योंकि इससे उनके पारिवारिक कानून, पर्सनल ला, उनका राष्ट्रीय जीवन और उनके यहाँ की महिलाओं के अधिकारों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इससे देश में सुन्दर वातावरण और पारस्परिक विश्वास की स्थिति उत्पन्न होती। इससे कहीं अधिक उनके ध्यान की पात्र स्वयं उनके सम्प्रदाय तथा महिला वर्ग की सैकड़ों, हजारों, नवविवहिता विधुओं के जलाये जाने या अस्वाभाविक ढंग से उनको मार डालने की घटनायें हैं जिनसे शायद इस विशाल देश में कोई दिन खाली जाता हो। राष्ट्रीय प्रेस की सूचना के अनुसार केवल दिल्ली में प्रत्येक बारह घन्टे पर एक नव विवाहिता वधू को जलाकर मार डाला जाता है[1]।

टाइम्स ऑफ इन्डिया, लखनऊ, 8 मार्च, 1986 में छपी एक खबर के अनुसार "गर्भपात : प्रत्येक वर्ष देश में लग–भग 60 लाख महिलायें गर्भपात (एम. टी. पी.) कराती हैं; किन्तु से केवल उनमे पांच लाख ही वैध गर्भपात होते हैं। इसकी सूचना यू. एन. आई. ने कलकत्ते से दी है। स्वयं सेवी संगठन, परिवार सेवा संस्था की निदेशिका, श्रीमती सुधा तिवारी ने पत्रकारों को इसकी सूचना देते हुये कहा कि प्रतिवर्ष लग–भग 6.6 लाख महिलायें नीम हकीमों द्वारा कियेगये 'अपराधिक' गर्भपात के कारण मर जाती हैं।"

मुसलमानों को खतरा और लग–भग विश्वास है कि यदि यह बलात् गुज़ारे का कानून पास हो गया तथा तलाक देने वाले पूर्व पति

---

1. क़ौमी आवाज़, दिल्ली, दिनांक 10 जून, 1984

www.abulhasanalinadwi.org

के लिये दूसरे विवाह होने तक (जिसका होना आवश्यक नहीं) और उसके न होने की दशा में जीवन-पर्यन्त गुज़ारा देना (जिस की मात्रा अनुमान है कि मँहगाई तथा जीवन–स्तर के बराबर बढ़ते रहने के कारण बढ़ाई जाती रहेगी) आवश्यक होगा, तो तलाक़ से बचते हुये (जो कभी–कभी जीवन की अपरिहार्य आवश्यकता बन जाती है तथा जिसे पश्चिमी बुद्धिजीवियों एवं हमारे देश के कानून निर्माताओं ने भी स्वीकार किया है) अपनी नापसन्द आने वाली जीवन–साथी से पीछा छुड़ाने के लिये मुसलमान भी ऐसे ही कार्य करेंगे जैसे अत्यधिक नृशंसता से पत्नी को विदा कराने के बाद भारत के समाज में घटित हो रहे हैं। अगर, खुदा न करे, यह क़ानून पास हो गया तो जो लोग जीवित रहेंगे वे अपनी आँखों से देख लेंगे या कानों से सुनेंगे।

मैं क्षमा प्रार्थी हूं कि एक ऐसे 'मित्रता पूर्ण, सुन्दर तथा विश्वास पूर्ण सभा में जो देश के सैद्धान्तिक एवं मौलिक विषयों पर विचार करने के लिये बुलाई गयी है। मैंने एक ऐसे विषय की चर्चा इतनी विस्तार से की जो विशेषरूप से मुसलमानों से जुड़ी हुयी है। किन्तु इसकी चर्चा किये बिना वस्तु स्थिति का सही आकलन तथा देश को सही दिशा की ओर मोड़ने एवं अपनी शक्ति और योग्यता को देश एवं मानवता की सेवा पर व्यय करने का कार्य नहीं किया जा सकता।

देश के लिये सही एवं सुरक्षित पथ

सत्य तो यह है कि हमारे देश के अस्तित्व उन्नति सम्मान तथा अखण्डता और उसके समकालीन दुनियाँ तथा इस खतरनाक व जटिल विश्व-स्थिति में अपनी क्षमतानुसार भूमिका अदा करने के लिये उचित, सुरक्षित ससम्मान तथा निर्भीक रास्ता वही है जो स्वतन्त्रता आन्दोलन के निश्छल बुद्धिजीवियों, महान और बहुमूल्य नेताओं पंड़ित जवाहर लाल नेहरू, मौलाना आजाद व उनके सहोयोगियों ने निश्चित किया। चाहे वह कितना लम्बा तथा कठिन क्यों न हो, वह सच्ची धर्म–निरपेक्षता, इसी जनतन्त्र तथा हिन्दू–मुस्लिम एकता का रास्ता है।

www.abulhasanalinadwi.org

इसके अतिरिक्त जो रास्ता निश्चिय किया जायेगा, वह चाहे उससे अस्थायी व सामाजिक सफलता क्यों न प्राप्त हो, देश के लिये विनाशकारी तथा उन बलिदानों पर पानी फेरने वाला है जो स्वतंत्रता संग्राम में दिये गये थे। इसके अतिरिक्त वह रास्ता देश को ऐसी कठिनाइयों व समस्याओं में फँसा देने वाला है जिसका कोई हल नहीं है।

देश के सामने तीन बड़े खतरे

मानवीय इतिहास, दर्शन तथा शिष्टाचार का छात्र होने के नाते अब मैं यह आग्रह करना चाहता हूँ (और मुझे भय है कि सम्भवतः दूसरा व्यक्ति जिस पर राजनीतिक विचार-धारा का प्रभाव है, न कहेगा) कि देश के लिये दो खतरे बड़ी चिन्ता के विषय हैं जिनपर आप का पहला ध्यानाकर्षण होना चाहिये। एक है अन्याय व अत्याचार का झुकाव, जन-जीवन तथा धन व सम्मान का मूल्य न होना (इसका सम्बन्ध किसी भी सम्प्रदाय से क्यों न हो)। इसका उदय साम्प्रदायिक दंगों, वर्ग के ऊँच–नीच होने के आधार पर पूरे-पूरे परिवारों व महल्लों का सफाया, थोड़े से धन–लाभ के लिये इन्सान की जान ले लेना, नृशंस अपराध तथा अन्याय की अधिकता और अन्त में (किन्तु सबसे अधिक लज्जाजनक वास्तविकता), वांछित तथा आशान्वित दहेज न लाने पर नव विवाहिता वधू को जलाने या ज़हर दे कर मारने और उनसे पीछा छुड़ाना है। जो लोग धर्म में आस्था रखते हैं, उनके लिये तो यह समझना बहुत सरल है कि इस ब्रह्मांड का निर्माण करने तथा गति देने वाला जो मां से अधिक प्रेम करने वाला और दयालू है, इस कार्य से प्रसन्न नहीं हो सकता और उसे अधिक समय तक बर्दाश्त नहीं करेगा, जिसके फलस्वरूप हज़ारों प्रयत्न और योग्यताओं के बावजूद कोई देश पनप नहीं सकता तथा वह समाज अधिक समय तक शेष नहीं रह सकता। किन्तु जो लोग धर्म में विश्वास नहीं रखते वे इस ऐतिहासिक यथार्थ से अवगत हैं कि इससे कम मात्रा के अत्याचार तथा नृशंसता के कारण बड़े-बड़े राजतंत्र और सभ्यतायें, जिनका किसी समय में

www.abulhasanalinadwi.org

डंका बजता था और आज भी इतिहास एवं साहित्य के पृष्ठों पर उनके दीप्त–चिन्ह हैं, पतन का शिकार होकर पुरानी दास्तान बन कर रह गयीं। इस वस्तुस्थिति को तुरन्त ध्यान देने की आवश्यकता है, राजनीतिक समस्याओं तथा चुनाव अभियान से अधिक इसके विरुद्ध तूफानी अभियान चलाने की आवश्यकता है, कड़े से कड़े कानून, उदाहरण प्रस्तुत करने वाले दण्ड, जन-संचार माध्यमों से काम लेने तथा प्रशासन को कड़े से कड़े कदम उठाने की आवश्यकता है; अन्यथा न बांस रहेगा न बाँसुरी।

दूसरा खतरा साम्प्रदायिकता, नृशंसता व हिंसा की खुली प्रवृत्तियाँ हैं जिनके सम्बन्ध में तनिक भी छूट, लचक व नरमी से चाहे कुछ समय तक लाभ पहुँच जाये या समस्या से अस्थायी मुक्ति मिल जाये किन्तु देश को भूगर्भीय विस्फोटक सुरंगों की दया पर छोड़ देना है जो अन्त में देश को ले डूबेगा। गांधीजी इस वास्तविक्ता से भली-भाँति परिचित थे कि साम्प्रदायिक द्वेष, हिंसा व नृशंसता, पहले देश की जनसंख्या के दो महत्वपूर्ण तत्व (हिन्दू-मुस्लिम सम्प्रदायों) के मध्य अपना कार्य करेगीं। फिर यहीं विभिन्न जातियों धार्मिक-मतभेदों, वर्गीं तथा बिरादरियों की पंक्तिबद्धता, और नस्ली, भाषायी, तथा क्षेत्रीय भेद-भाव के रूप में सामने आयेगी। और जब यह कार्य समाप्त हो जायेगा तो वह आग के समान (जब उसे जलाने के लिये ईंधन न मिले तो वह अपने को खाने लगती है) देश शान्तिप्रय नागरिकों को अपना लुक्मा बनालेगी और यह देश नष्ट हो जायेगा।

इसलिये इस नृशंस धार्मिक उन्माद (Aggressive Revivalism) व हिन्सा, एक ही सम्प्रदाय से माँग तथा उसकी आलोचना, का सिलसिला, अपने को बिल्कुल बदल देने और अपनी मिल्ली, सांस्कृतिक व धार्मिक व्यक्तित्व से अलग होने की लगातार माँग, सैकड़ों और हज़ारों वर्ष के सोये हुये, बल्कि मरे हुये इतिहास को पुनः जागृत करना तथा जीवित करना[1], जो परिर्वतन पहले (अच्छे

[1. कृपया फुट नोट पेज 30 पर देखें]

www.abulhasanalinadwi.org

या बुरे) हुये तथा उनको इस देश के यथार्थवादी, उदार हृदय, और स्वाभिमानी नागरिकों ने सदियों तक स्वीकार किया, उनकी यात्रा को पहले कदम से आरम्भ करना तथा उनकी पूर्ति का प्रयास करना एवं इस देश को उन नयी समस्याओं तथा कठिनाइयों से दो-चार करेगी जिनका सामना करने की न केवल इस देश के पास समय है और न आवश्यकता। इसके अतिरिक्त शासन एवं व्यवस्था तथा बुद्धिजीवी वर्ग की शक्ति बेकार व्यय होगी, जिसकी देश को अपने रचनात्मक कार्यों, अखण्डता व स्थायित्व के लिये आवश्यकता है। इस लिये इस दरार को जबकि वह साधारण ध्यान तथा मसाले से बन्द हो सकता है, उससे पहले बन्द कर दिया जाये जब वह हाथियों से भी बन्द नहीं हो सकेगा। देश के इस सामान्य व बुनियादी हित के लिये किसी का क्रोध का चुनाव-परिणाम पर प्रभाव पड़ने का किसी राज्य स्थायी प्रशासन की नागवारी की परवाह नहीं करना चाहिये, क्यों कि देश इन सब चीजों से अधिक प्यारा तथा सिद्धान्त, नेक-चरित्र व लाभ से ऊपर है।

सिद्धान्तवादिता का एक विचार–चैतन्य उदाहरण

मैं इस सिद्धान्तवादिता का एक उदाहरण प्रस्तुत करता हूँ जो देश के महान नेता तथा प्रथम प्रधान मन्त्री पंडित जवाहर लाल नेहरू

[पेज 29 का फुट नोट]

1. जिसका प्रदर्शन किसी यश अथवा अन्य परम्पराओं के आधार पर मस्जिद को मन्दिर में परिवर्तित करने या उसमें मूर्तियाँ रखने का जो कृत्य है जिसका आधार बेज़बान, अराजकता उत्पन्न करने वाली तथा गम्भीर उदाहरण बाबरी मस्जिद, अयोध्या की घटना है। अनेक मुस्लिम तथा ग़ैर मुस्लिम इतिहासकार एवं गवेषणात्मक कार्य करने वालों ने दावा किया है इसका कोई ऐतिहासिक व प्रमाणिक आधार नहीं कि बाबर ने किसी मन्दिर या राम जन्म-भूमि को परिवर्तित किया। यह प्रारम्भ से मस्जिद है। ... ...

www.abulhasanalinadwi.org

ने पेश की, 1950 ई. जब कांग्रेस पर बाबू पुरुषोत्तम दास टंडन जी के नृतृत्व में (जो कांग्रेस के अध्यक्ष हो गये थे) साम्प्रदायिक तत्व छा रहा था और वह कांग्रेस को धर्म निरपेक्ष और हिन्दू मुस्लिम एकता के बजाए जिसकी बुनियाद गांधी जी, जवाहर लाल जी और मौलाना आजाद ने डाली थी, वह सम्प्रदायवादी और हिन्दू उन्माद Hindu Revivalism)की तरफ़ बढ़ना चाहते थे और लोकतांत्रिक एवं बहुमत के सम्मान और उसकी श्रेष्ठता जो जवाहर लाल जी में थी, से इसकी आशा कर रहे थे कि वह अपने उमर भर के विचार और चिंतन की प्रणाली को छोड़कर कांग्रेस में आने के लिये उसको अख्तियार करेंगे। जवाहर लाल जी ने इससे इंकार कर दिया। इस अवसर पर जो उन्होंने भाषण दिया वह भारत के इतिहास में मील के पत्थर की हैसियत रखती है। गांधी नगर नासिक में 19 सितम्बर, 1950 ई० को उन्होंने फ़र्माया।

"मैं जनतन्त्रवादी नहीं हूँ।" यदि इसका अर्थ यह लिया जाता हो कि मैं किसी भीड़ की राय के समक्ष झुकूं मैं कभी ऐसी बात नहीं करुँगा जिसके ग़लत होने का मुझे विश्वास हो तथा जनता (हुजूम) चाहती हो कि इस ग़लत बात को मैं मानू ऐसी कोई स्थिति में यह सम्भव है कि यदि कांग्रेस चाहे तो मैं कांग्रेस से बाहर निकल कर व्यक्तिगत रूप से अपने विचारों के लिये लड़ूँ।"

"कुछ लोग मुझ से आकर कहते हैं कि मजमा (समूह) अमुक बात नहीं मानता और लोकतन्त्र की आवाज आगे बढ़ रही है। वास्तव में यह कायरों की दलील है। यदि लोकतन्त्र का अर्थ हुजूम के आगे झुकना है तो ऐसे लोकतन्त्र को नरक में चले जाना चाहिये। इस प्रकार की मानवता जहाँ भी सिर उठायेगी मैं उसके विरूद्ध लड़ूंगा। यहाँ लोकतन्त्र मुझ से मन्त्रि मण्डल छोड़ने को कह सकता है। मैं उसका आदेश मानूँगा, यदि कांग्रेसी यह चाहते हैं कि

www.abulhasanalinadwi.org

वे आने वाले चुनावों में चन्द मत प्राप्त करने के लिये अपने सिद्धान्त व दृष्टि को न छोड़ बैठें तो कांग्रेस निर्जीव हो जायेगी । मुझे ऐसी लाश की आवश्यक्ता है । "[1]

तीसरी चीज़ जो ध्यान देने योग्य है तथा जो चिन्ता का कारण है वह है नैतिक पतन व प्रशासनिक अराजकता (Corruption) है जो इस सीमा तक पहुँच गया जिसका उदाहरण कम से कम मुझे इस देश के इतिहास में इस से पहले नहीं मिला । आज इस सम्बन्ध में सरकारी रिपोर्टों और देश की व्यवस्था के टीप-टाप तक प्रगति को न देखिये । सामान्य नागरिकों, मध्यम वर्गीय व्यक्तियों तथा उन लोगों से पूछिये जिनका अदालतों, कार्यालयों, रेलवे, हवाई सेवा, थानों, टेलीफोनों, अस्पतालों, सरकारी ठेकों एवं जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से काम पड़ता रहता है। रिश्वत के बिना साधारण सा काम भी नहीं हो सकता है। पैसे के द्वारा हर काम कराया जा सकता है । हर अभियुक्त को छुड़ाया जा सकता है । हर सम्भ्रान्त व्यक्ति को फांसा जा सकता है । हर प्रकार के ग़लत निर्णय किये जा सकते है । हर जगह दंगा कराया जा सकता है । यहाँ तक कि देश के भेद को भी बेचा जा सकता है । दवाओं तथा खाद्य पदार्थों में मिलावट हो रही है। स्वास्थ्य सेवायें प्राप्त होना दुर्लभ हो रही हैं । मरीज़ों के लिये जो व्यवस्था हो रही है वह बेकार जा रही है । पाषाण हृदयता अपनी चरम सीमा तक पहुँच गयी है । रेलवे, हवाई सर्विस में रिश्वत की गर्म बाज़ारी सरकार को प्रति-दिन लाखों, करोड़ों रूपये की हानि हो रही है । इस सब की जड़ में पैसे से बढ़ता प्रेम, ख़ुदा का डर दिल से निकल जाना तथा इन्सान से सहानुभूति, देश से वफादारी एंव उसके हित को वरीयता देने और उस से हानि का ध्यान रखने की भावना समाप्त हो जाती है । ऐसी दशा में देश औद्योगिक, राजनीतिक एंव वैदेशिक संबंधों की दृष्टि से विकास तथा शिक्षा के प्रयास एंव साक्षरता

---

1. क़ौमी आवाज़, लखनऊ, 22 सितम्बर, 1950 ई०

www.abulhasanalinadwi.org

के अनुपात बढ़ जाने के बावजूद तीव्र गति से पतन की ओर जा रही है। लोग जीवन से अब ऊब गये हैं और असफलता तथा शर्म की बात यह है कि अंग्रेज़ी शासन-काल को याद करते और उसकी कामना करते हैं जब व्यवस्था चौकस थी, रेलें समय से चलती और पहुँचती थीं, अस्पताल संतोष, प्रसन्नता तथा सेवा एंव सहानु-भूति के केन्द्र थे। नवयुवक अपने परिश्रम व योग्यता के आधार पर होते थे। नियुक्तियाँ तथा प्रोन्नति अर्हता के आधार पर होती थी। अब यह सब स्वप्न व कल्पना मात्र रह गया है।

भारतीय प्रेस पत्रकारों से शिकायत

महानुभावो। चूँकि आप को किसी परम्परागत राजनीतिक सम्मेलन में नहीं अपितु एक ऐसी निः संकोच गोष्ठी में सम्मिलित होने का निमन्त्रण दिया गया है, जिसमें हम एक ऐसे वर्ग के समान हैं जो नाव पर सवार है या ऐसे परिवार के सदस्य हैं जो किसी समारोह में एकत्र हुये हैं। एक दूसरे से निः संकोच, अपने दिल की बात कहने तथा शिकवा-शिकायत का अधिकार मैं अपने देश के अंग्रेज़ी, हिन्दी तथा उर्दू पत्रकारों से कुछ कहने का साहस करता हूँ।

आप से अधिक कौन इस बात को जानता है कि आदमीयता तथा प्रेम बढ़ाने, अपेक्षा कृत दो सम्प्रदायों तथा स्वयं एक सम्प्रदाय के लोगों में कटुता, कड़वाहट, कुधारणा, घृणा एंव अरूचि पैदा करने में प्रेस को जो अधिकार है, वह किसी दूसरी संस्था को नहीं। मैनें एक बार पत्रकारों तथा सम्पादकों को एक सम्मेलन में प्रतिनिधियों को जो कुछ वर्ष पूर्व लखनऊ में आयोजित हुआ था, संम्बोधित करते हुये फारसी का एक मिस्रा (आधा शेर) एक अक्षर के परिवर्तन के साथ पढ़ा था। शायर अपने माशूक़ से कहता है :–

"ज़ेरे कद्मत हज़ार जानें अस्त"। तुम्हारे क़दम के नीचे हज़ारों जानें हैं। मैनें केवल एक अक्षर बदलकर कहा :–

"ज़ेरे क़लमत हज़ार जानें अस्त"

www.abulhasanalinadwi.org

आप के क़लम के नीचे हज़ार जानें हैं, मैं यह नहीं कहूँगा कि आहिस्ता चलें या बिल्कुल न चलें। मैं कहूँगा कि सावधानी से चलें। मैने 10 नवम्बर, 1985 ई० को मद्रास के पत्रकार सम्मेलन में जो मुस्लिम प्रर्सनल लॉ के प्रश्न पर अयोजित की थी, कहा था कि मैं अखबार को एक सच्चा और ईमानदार कैमरा समझता हूँ, जिसका काम यह है कि वह चित्र को (उसके सुन्दर या भद्दे होने से कोई सम्बन्ध नहीं) अपने अस्ली रंग-रूप में प्रस्तुत कर दें। देश में घटित होने वाली घटनायें, विभिन्न सम्प्रदायों की भावनायें व शिकायतें विरोध प्रकट करने के लिये बुलाई जाने वाली सभायें तथा जुलूसों को अपनी सही भीड़, श्रोताओं की संख्या का सही अनुमान तथा वक्ताओं व श्रोताओं की वास्तविक भावनाओं व उनके प्रभाव के साथ पेश करें, जिससे कि सरकार, देश तथा जनता को स्थिति का सही ज्ञान हो सके तथा वे अपने प्रबन्ध कौशल, नैतिक उत्तरदायित्व को समझ सकें। मैं उस सीमा तक इसे आवश्मक मानता हूँ कि यदि हिप्पी Hippies या हमसे आपसे दूर कोढ़ियों (कुष्ठ रोगियों) या संक्रामक रोगियों का कोई सम्मेलन हो, तो भी हमको उसे संख्या के साथ पेश करना चाहिये, ताकि देश के सुधारवादी एवं प्रशिक्षण संस्थायें स्वास्थ्य–रक्षा की व्यवस्था तथा समाज सुधारक (Social workers) अपना दायित्व समझें और समय तथा काम की व्यापकता एवं आवश्यकता के अनुसार तैयार होकर मैदान में आयें। देश में किसी प्रकार सरण लक्षण प्रकट होने पर अथवा किसी बुरे या विध्वंसक झुकाव को पूर्णतया न सूचित करने से देश व समाज सख्त खतरे में पड़ सकता है। देश के पुराने इतिहास में इसके अनेक दृष्टांत मौजूद हैं। एक वृहत् देश, विकसित व शक्तिशाली संस्कार, धार्मिक व शिक्षित समाज ठीक समय पर खतरे तथा अस्वस्थ झुकाव तथा प्रयत्नों को रोकने में ढ़ील वरतने के फल-स्वरूप स्थायी पतन का शिकार हो गया तथा विश्व इतिहास में पुरानी दास्तान बनकर रह गया है। हमारे माननीय पत्रकारों तथा सम्पादकों को अपने सम्पादकीय एवं मत प्रकट करने वाले कालमों में अपने दृष्टि-

www.abulhasanalinadwi.org

कोण तथा अपनी अभिरुचि या अरुचि व्यक्त करने का पूरा अधिकार है। उनके इस अधिकार को कोई छीन नहीं सकता। किन्तु घटनाओं की रिपोर्टिंग और विभिन्न सम्प्रदाय तथा वर्ग की भावनाओं शिकायतों तथा माँगों का दृष्टांत पेश करने में उनको किसी प्रकार के रंग मिलाने तथा पक्षपात से काम नहीं लेना चाहिये। देश के सबसे बड़े अल्पसंख्यक समुदाय मुसलमानों को शिकायत है कि उनके जलसे–जुलूसों, विरोध प्रकट करने वाले प्रदर्शनों तथा यहाँ तक कि उनके मिल्ली समारोहों एवं जुलूसों का सही चित्र भारतीय प्रेस में आने नहीं पाती। केवल अख़बार पढ़कर किसी को उनकी भावनाओं की प्रचंडता, बेचैनी, असंतोष तथा उनकी अधिकाँश संवैधानिक माँगों का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। यह न केवल इस मुख्य अल्पसंख्यक समुदाय के लिये हानि कारक है तथा इसके साथ अन्याय हुआ है, अपितु देश व सरकार दोनों के लिये हानिकारक है। यह इन दोनों के हित में दुश्चिन्तक तथा अनिष्ट-सूचक है कि इन घटनाओं की गम्भीरता का ज्ञान न होने पाये और वे थोड़े से प्रयास से उसका निराकरण व उपाय न कर सकें, जो बढ़ जाने के बाद कभी–कभी सम्भव नहीं होता है।

मैं आपकी अनुमति से उदाहरण स्वरूप इस सम्बन्ध में अपने कुछ अनुभव पेश कर रहा हूं। 27-28 दिसम्बर, 1972 ई. को बम्बई में पहली बार आल इन्डिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड भी स्थान कार्य रूप में आयी तथा YM.C.A:, मदनपुरा के मैदान में एक सार्वजनिक सभा हुयी जिसमें सावधानी से किये गये अनुमान के अनुसार लग–भग एक लाख लोगों की भीड़ थी। उसी दिन स्वर्गीय अब्दुल हमीद दलवाई साहब के नेतृत्व में एक प्रदर्शन हुआ जिसमें चन्द दर्जन से अधिक लोग नहीं थे। मुसलमानों ने क्रोध में आकर उन पर चप्पलें फेकीं। पुलिस ने प्रदर्शनकारियों को अपने घेरे में ले लिया, वर्ना उनको बड़ी कठिन समस्या से निपटनाप ड़ता। अगले दिन मैंने स्वयं अंग्रेजी समाचार पत्र पढ़े। उनमें मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के जलसे का बहुत थोड़ा उल्लेख था। किन्तु दलवाई साहब के प्रदर्शन को विशिष्ट रूप से दिखाया गया

www.abulhasanalinadwi.org

था। इससे अपरिचित व्यक्ति यह समझता कि उसमें हज़ारों लोग सम्मिलित थे तथा मुसलमानों का प्रतिनिधित्व यही जुलूस कर रहा था। इस असंतुलन तथा तथ्यों को स्पष्ट न करने का जो प्रभाव प्रशासन, देश के बुद्धिजीवियों एवं देशवासियों पर पड़ सकता है, उसका अनुमान लगाना कठिन नहीं है।

दूसरा उदाहरण अभी हाल का है। 6-7 अप्रैल, 1985 ई० को कलकत्ते में मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड की बैठक हुई। 7 अप्रैल 1985 को शहीद मीनार मैदान में शाम को एक जन सभा हुयी जिसमें अनुभवी लोगों के अनुसार पाँच लाख लोग सम्मिलित हुये थे। जहाँ तक दृष्टि कार्य कर रही थी, मनुष्यों का जंगल दिखाई देता। मैं बोर्ड का अध्यक्ष हू तथा इस जलसे में मैं उपस्थित था। मैंने भाषण भी दिया था। अगले दिन आसनसोल के लिये जा रहा था। मैने हावड़ा स्टेशन पर जितने अँग्रेजी के समाचार-पत्र सुलभ थे, प्राप्त किये। जो समाचार-पत्र मुझे प्राप्त हुये उनमें कहीं इस जलसे की चर्चा तक न थी। एक अँग्रेजी समाचार-पत्र में यह खबर दी गयी थी "Hundreds of Muslims Attended" अब आप ही बताइये कि न केवल बाहर के लोगों को बल्कि कलकत्ते के निवासिवों को भी यह जलसा देखने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ। सही स्थिति तथा अपने देशवासी भाइयों की भावनाओं की प्रचंडता का अनुमान कैसे हो सकता है? स्वयं शासन-तन्त्र,न्यायालय, व्यवस्था तथा देश का यथार्थवादी वर्ग इस का किस प्रकार उपचार कर सकता है? अति शयोक्ति न होगी, यदि मैं कहूँ कि सैकड़ों उदाहरणों में से ये दो उदाहरण हैं, जो मैने प्रस्तुत किये।

प्रस्तावित मुस्लिम पर्सनल लॉ बिल के सम्बन्ध में भी यही कटु अनुभव हुआ है कि हमारे अँग्रेजी व हिन्दी के समाचार-पत्रों ने (अत्यधिक क्षुद्र व्याकुलता के साथ) खबरें देने, टिप्पणी करनें, खण्डनात्मक तथा विरोधी लेख व पत्र प्रकाशित करनें में म्युनिसिपैलिटी एवं कार्पोरेशन के नागरिक कानून (one way traffic) का प्रदर्शन

www.abulhasanalinadwi.org

किया है। खोज करनें पर भी पर्सनल लॉ के अन्तर्गत विचाराधीन बिल के समर्थकों या उसके स्पष्टीरण करनें वालों का कोई भी लेख या पत्र देखनें में नहीं आया। इस प्रकार समाचार-पत्रों एवं पत्रिकाओं (मुझे क्षमा करें) एक ही दृष्टिकोण के प्रस्तुतकर्ता तथा सोत्साह समर्थक क्षेत्र, जो बहुसंख्यक समुदाय का बहुमत तथा मुस्लिम समुदाय के उँगलियों पर गिने जाने वाले चन्द लोगों का दृष्टिकोण तथा विचार था। इससे देश-विदेश के किसी समाचार-पत्रों का पाठक (जिसकी जानकारी व विचार का आधार समाचार-पत्र के अध्ययन से हो) इस बेचैनी, उत्साह, एवं बेमिसाल बैचारिक समानता का अनुमान नहीं किया जा सकता था जो भारत के दस या पन्द्रह करोड़ मुसलमानों में पाई जाती है तथा जिससे परिचित होना प्रत्येक यथार्थकारी, लोक तन्त्र एवं विचार की स्वतन्त्रता का सम्मान करने वाले देश-प्रेमी तथा उत्तरदायी व्यक्ति का कर्तव्य है।

अन्त में दिल्ली के ही (जहां हम एकत्रित हैं) प्रसिद्ध उर्दू कवि मिर्ज़ा 'ग़ालिब' का एक शेर पढ़ते हुये आप से विदा लेता हूँ :–

रखियो 'ग़ालिब' मुझे इस तल्ख़ नवाई से माफ़,
आज कुछ दर्द मेरे दिल में सिवा होता है।

अबुल हसन अली नदवी

प्रकाशक ऑल इन्डिया सालीडेरिटी फोरम, टैगोर मार्ग, पोस्ट बॉक्स 119,
लखनऊ एवं मुद्रक नदवा प्रेस, लखनऊ

www.abulhasanalinadwi.org

www.abulhasanalinadwi.org